शोधामृत
(कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका)

ISSN : 3048-9296 (Online)
3049-2890 (Print)
IIFS Impact Factor-4.0
Vol.-3; issue-1 (Jan.-March) 2026
Page No- 293-297
©2026 Shodhaamrit
https://shodhaamrit.gyanvividha.com

Author's :

1. प्रो. राजीव कुमार झा
शोध-निर्देशक, प्राध्यापक, हिन्दी-विभाग, लंगट सिंह महाविद्यालय, मुजफ्फरपुर.

2. शोभा कुमारी
शोधार्थी, हिंदी-विभाग, बी. आर. ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर.

Corresponding Author :

प्रो. राजीव कुमार झा
शोध-निर्देशक, प्राध्यापक, हिन्दी-विभाग, लंगट सिंह महाविद्यालय, मुजफ्फरपुर.

सूर्यबाला के उपन्यास 'सुबह के इंतजार में' स्त्री

उपन्यास साहित्य की एक ऐसी विधा है, जिसमें मानव जीवन के विभिन्न पक्षों का विस्तार और क्रमबद्ध तरीके से वर्णन किया जाता है। उपन्यास में व्यक्ति के बाहरी जीवन के साथ-साथ उनके अंतर्मन के भीतर चलने वालों विचारों, भावनाओं और संघर्षों को अभिव्यक्त करते हैं। समकालीन हिंदी कथा साहित्य में सूर्यबाला को विशिष्ट स्थान प्राप्त है। सूर्यबाला ने अपने कई उपन्यासों के माध्यम से स्त्री जीवन की आंतरिक पीड़ाओं, मध्यवर्गीय संघर्ष, पारिवारिक विघटन, मानवीय मूल्य-संकट और आत्मसंघर्षों को अभिव्यक्त किया है। इनका रचना संसार समाज, परिवार, सांस्कृतिक और आदि विविध आयामों से निर्मित है, उनकी यही बहुआयामिता उपन्यासों को और भी विशिष्ट बना देती है।

सूर्य बालाजी द्वारा रचित उपन्यास 'सुबह के इंतजार में' सन 1980 में प्रकाशित हुआ। यह एक सामाजिक उपन्यास है जो न केवल बलात्कार जैसी स्त्री जीवन की त्रासदी तथा उसके बाद आने वाली समस्याओं को बताता है अपितु सामाजिक संरचना की क्रूरता और वर्गीय असमानता पर भी तीखा प्रहार करता है। इस उपन्यास की नायिका मानू के माध्यम द्वारा सूर्यबाला ने स्पष्ट किया स्त्री के साथ घटित हिंसक घटना न केवल व्यक्तिगत होती है अपितु वह पूरे सामाजिक तंत्र की विफलताओं का परिणाम होती है। इस उपन्यास की नायिका मानू वर्तमान से बार- बार अतीत के अंधेरी गलियारों में पहुंच जाती है, "अतीत.. हां मेरा सारा अतीत बाहें फैलाये आकर मुझसे लिपट जाता है।"[1]

जहाँ उसका निम्न मध्य वर्गीय परिवार तथा उनकी आर्थिक स्थितियां तथा संघर्ष है" मेरा अतीत यानी जीवन का वह दायरा जहां हम सब यानी मां, पिता जी, बुलु, छोटा बिट्टू और मैं – मानू, अलग-अलग न रहकर बस एक उदास खामोश सन्नाटे में बदल जातें है"[2]। मध्यवर्गीय जीवन की विडंबना केवल आर्थिक अभाव तक ही सीमित नहीं होती अपितु अपने आत्मसम्मान बनाए रखने तथा अपनी स्थिति को छिपाए रखने की कोशिश होती है। घर के दरवाजे की खटखटाहट मात्र से जिस प्रकार पूरे घर में भय का वातावरण बन जाता है। वह समाज के

मध्य बने नकली सामाजिक प्रतिष्ठा आडंबर की मानसिकता को मानू की स्मृतियों द्वारा सूर्यबाला जी स्पष्ट करती है –"जाने क्यों अब भी, कल्पना में भी अपने अतीत के घर का कुंडा खटखटाने से पहले लगता है उस घर पर कोई अन्याय करने जा रही हूं। कुंडा खटकेगा तो दरवाजा एकदम से नहीं खुलेगा। पहले बुलू आकर दराजों से झांकेगा। फिर वह मां से फुसफुसायेगा। मां जल्दी से झिल्लाड़ पेटीकोट पर लपेटा दो हाथ का टुकड़ा फेंक एक फटी पर धुली-सी साड़ी पहनकर दरवाजा खोलेंगी, तब तक पिताजो तमाम छेदों वाली बनियान के ऊपर धारीदार कमीज डाल लेंगे, बुलू कोने में पड़ी खाट की चादर खींच, मैले तकिये को ढांक देगा- बस, कुंडा खटखटाने से खुलने तक हमारी गतिविधियों का यही क्रम रहता था।"[3]

एक मध्यवर्गीय जीवन की सबसे बड़ी त्रासदी में से एक है आर्थिक विपन्नता तथा उससे पैदा होने वाली हीनता बोध का दुख। यह दुख केवल मनुष्य तक ही हान पाला हीनता बोध का दुख। यह दुख केवल मनुष्य तक ही सीमित नहीं होता बल्कि पूरे परिवार की मानसिकता को भी प्रभावित करता है। "अपनी याददाश्त में हुमने कभी पिताजी को कोई नौकरी करते नहीं, बस लेंगातार दिन के दिन कड़ी धूप, कड़ी ठंडक और बारिश में नौकरी तलाश करते हुए ही देखा। कभी-कभी बीच में कुछ-कुछ महीनों की नौकरी लग जाती। कुछ दिन अपेक्षाकृत चैन से कटते, फिर वही पुरानी तलाश और दर-दर भटकने का सिलसिला शुरु हो जाता। फिर धीरे-धीरे अस्थायी नौकरियों के ये सिलसिले जुटने भी कम होने लगे। अधिकतर विज्ञापनों में तीस से पैतीस या ज्यादा से ज्यादा चालीस तक की उम्र मांगी जाती। पर पिताजी बयालीस के होने पर भी पचास से कम नहीं लगते थे। जिससे भी उम्र की दुहाई देते, वह समझता नौकरी पाने के लिए झूठ बोल रहे हैं। सर्टिफिकेट दिखाते तो लोगों के चेहरे के भाव स्पष्ट जताते सर्टिफिकेट तो जाली भी हो सकते हैं।"[4]

बयालीस वर्ष की आयु में पचास का दिखाना केवल शारीरिक जर्जरता नहीं बल्कि आर्थिक अभाव से मानसिक तनाव का कारण है- "जैसे रसोई बनाने का, किसी के घर दिनभर बच्चे की आयागिरी करने का, या सड़क पर खड़े होकर साबुन या बिस्कुट बेचने जैसे काम। सुनते ही मां का चेहरा अपमान, खीझ और दयनीयता से लाल हो उठता। वे शालीनता से कहती, 'जी, मैं प्रतिष्ठित, पढ़े-लिखे घर की हूं। सिलाई, बुनाई, कढ़ाई वगैरह से संबंधित कोई काम हो तो बताइए..."[5] इस कथन द्वारा स्पष्ट होता है कि आधुनिक परिवारों में काम उनकी गरि तथा सामाजिक स्तर के आधार पर आंका जाता हैं। आर्थिक स्थिति के अभाव के बावजूद प्रतिष्ठा का भाव बना रहता है।

बलात्कार होने के पश्चात एक लड़की के जीवन तथा उसके परिवार की प्रतिक्रिया की स्थिति सूर्यबाला जी ने इस उपन्यास के द्वारा किया है। मामा के घर में मानू के साथ जब जोर जबरदस्ती की जाती है तो मामा- मामी इस बात को शांति से मानू की शादी की बात कर सुलझाने की बात करते है किंतु वह आदमी मामा को गलत काम की पोल खोल ने की धमकी दे कर चुप करा देता है "ठेकेदार के पास जाकर मेरी बदचलनी का ढिंढोरा पीट आईये मैं युनियन की मदद लेकर आप के नाम का मुर्दाबाद बुलवा देता हूँ"[6]

मानू के घर वापस लौट कर आने के बाद इस बात की वास्तविकता का पता चलता है तो घर वालो की प्रतिक्रिया इस प्रकार रहती है" जल्दी ही बुलू को वास्तविकता मालूम पड़ी गई थी। मेरे प्रति उसके हाव-भाव बिल्कुल बदल गए थे। वह मुझसे कटने करने लगा था।"[7]

बिल्लू का यह परिवर्तन तथा माँ की चुप्पी मानू को ही बिना दोष के ही दोष का भागी बना देता है-"काश, हम अपनी सारी तंगहाली के साथ खुलेआम जी सकते। मां लोगों के घर खाना बना पातीं, बर्तन धो पातीं, पिताजी ठेले पर फेरी लगा पाते, बुलू जूते में पालिश कर पाता. शायद हम इससे कहीं बेहतर जिंदगी जी पाते... लेकिन अब तो उसका भी सवाल नहीं था। मेरी कलंकपूर्ण स्थिति का तो इस समाज में भी कोई निर्वाह नहीं था न ?"[8] मानू का जीवन के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण है, किंतु मानू के बलात्कार के बारे में जानकर बुलू का मानू के प्रति अनदेखा व्यवहार, शराब पीने की आदत देखकर मानू व्यथित भाव बुलू के समक्ष प्रकट करती है "जानती हूँ, तुझे कहने की जरुरत नहीं।.....

वहां भी मानू बुलू के घर छोड़कर आने का दोष खुद पर ही आरोपित कर लेती है" मेरी जिस स्थिति को स्वीकार करने की दहशत से मां ने खाट पकड़ ली, पिताजी कमजोरी से जर्जर हो गए, वह सब सह पाने के लिए तुझे मजबूर करना तेरे ऊपर लादा गया जुल्म होगा न !"[9] इस उपन्यास में नया मोड़ तब आता है जब बुलू को अपने किए व्यवहार का पश्चाताप होता है और वह मानू के साथ घर में बिना बताए घर छोड़ देता है। जहाँ वह गुसाई दादा नाम के व्यक्ति के धर्मशाला में आश्रय लेते है। अपनी स्थितियों को छुपाने के लिए बुलू को झूठ का सहारा लेना पड़ता है। "काम की खोज में आया हूँ, दादा।[10] यह मेरी दीदी है-विधवा" इस कथन द्वारा समाज का दोहरा चेहरा स्पष्ट होता है जहां समाज बलात्कार पीड़िता की अपेक्षा विधवा को सामाजिक सहानुभूति दृष्टि प्रदान करता है।

बुलू अपने झूठ की बात को स्पष्ट करते हुए मानू से कहता है विधवा कहकर तुम्हारा परिचय देने के पीछे बुलू अपने झूठ की बात को स्पष्ट करते हुए मानू से कहता है "विधवा कहकर तुम्हारा परिचय देने के पीछे ही कोई कायरता या चाल थी। सच मानो, वह मैंने बस नई जगह अपनी स्थिति सँभालने के लिए ही कहा था। इसका अर्थ तुमने यह कैसे लगा लिया कि में समाज के सामने तुम्हें स्वीकारने से ड़र रहा हूँ? न में अब उतना छोटा, अबोध बच्चा ही रहा हूँ जितना तुम समझती हों। गिराज की नौकरी ने मेरी उम्र में अनुभव के कई साल जोड़ दिये हैं। तुम देखना, में किस दिलेरी से सब कुछ स्वीकारता हूँ।[11]

मानू में स्त्री चेतना का स्वर है। मानू समाज के दोहरे रवैए को अस्वीकार कर अपने साथ हुई घटना को स्वीकार करती है। उसे समाज की सहानुभूति नहीं बल्कि अपने स्त्रीत्व की नई पहचान बनाना चाहती है। इस कथन द्वारा स्पष्ट होता है"सब जानती हूं बुलू, पर तू भी जानता है न, इस समय मेरे रोएं-रोएँ में एक कुटिल विद्रोह पनप रहा है। इस विद्रोह की अंतिम परिणति होगी मेरे स्त्रीकार में... मेरी इस स्थिति, इस अभिशाप के स्वीकार में, जो कुछ मैं करूंगी, जैसे भी मैं जिऊंगी, समाज द्वारा थोपे इस जुल्म की सच्चाई को जीते हुए इसे नकारते हुए नहीं समाज के कलंक को समाज के बीच जिंदादिली से ढोते हुए... तू मेरा साथ देने को कह रहा है न-पर दे सकेगा तू? तो जा, इस नयी जगह के गली-कूचे में सबसे गर्दन उठाकर कह आ कि तेरी दीदी विधवा नहीं, वह वह वह.."[12] धर्मशाला में रहते हुए गुसाईं दादा उन दोनों की रहने, खाने, पीने तथा अपने जानने वाले के पास बुलू को काम में लगाने की हर संभव सहायता करते है। क्यों कि बुलू के कहे झूठानुसार मानू के पति की मृत्यु के पश्चातकि बुलू के कहे झूठानुसार मानू के पति की मृत्यु के पश्चात सास ससुर द्वारा प्रताड़ित घर से घर से निकाल देते है। एक दिन मानू जब गुसाई दादा से खुद के लिए काम में लगाने की बात करती है। मानू को गुसाई दादा समझाते हुए कहते हैं "सास-ससुर कैसे भी हों, बड़े हैं। चार कड़ी बात भी कहें तो बर्दाश्त करने में ही भला है। बड़ा आसरा रहता है, नहीं तो सयानी लड़की चाहे लाख गंगाजल में धुली हो, यह समाज उस पर कीचड़ उछालने से बाज नहीं आनेवाला"[13]।

गुसाई दादा के कथन से स्पष्ट होता है आज भी समाज स्त्री के स्वतंत्र पहचान को अस्वीकार कर उसे किसी पुरुष या परिवार के संरक्षण में सुरक्षित मानता है। गुसाई दादा मानू के संग सहानुभूति रखते है, किंतु वह भी सामाजिक मानसिकता से प्रभावित है। इसके पश्चात मानू जब गुसाई दादा को अपनी साथ हुई घटना को बताती है। वह बुलू को अपनी धर्मशाला से चले जाने को कहते है" "प्रणाम का जवाब न मिलने प बुलू चौंका, तब तक महापातक से बचने की-सी मुद्रा में दादा आधा हाफ्ते, आधा हुमकते हुए बोले थे-'कल सबेरे तक तुम लोगों को धर्मशाला छो देनी है-जहां चाहे कहीं और ठिकाना ढूंढ लो- आगे मैं कुछ ना सुनना चाहता ।' बोलते हुए उनके होंठ कांप रहे थे, नथुने फड़क रहे थे। वाक्य समाप्त करते-न-करते उसी तरह उत्तेजना में कांपते आगे बढ़ गए थे।"[14]

गुसाई दादा के माध्यम से सूर्यबाला जी ने गुसाई दादा से समाज की दोहरी मानसिकता प्रकट की है। जब तक गुसाई दादा को मानू को विधवा होने की सच्चाई पता थी तब तक वह उनकी सहानुभूति कर संरक्षण तथा सहायता प्रदान करते है। किंतु जब उन्हें सचाई तथा सहायता प्रदान करते है। किंतु जब उन्हें सचाई ज्ञात होती है उनके प्रति गुसाई दादा का व्यवहार बदल जाता है। जो स्त्री के प्रति असुरक्षित दृष्टिकोण का तीखा प्रहार करता

है। जहाँ उन्हें काकी की कोठरी में आश्रय मिलता है। काकी के परिवार में विधवा बहु माधुरी तथा दो बच्चे होते है। काकी के घर आकर काकी तथा माधुरी के साथ से मानू को नई दिशा मिलती है।

मानू की तबियत खराब होने पर काकी मानू का ध्यान रखती है काकी का प्यार तथा व्यवहार देख कर मानू काकी को अपनी बलात्कार तथा गर्भ सच्चाई बताने का फैसला करती है, जिसे काकी सहर्ष रुप से स्वीकार करती है तथा उसकी सहायता करती है। एक दिन काकी जब मानू का गर्भपात कराने के लिए किसी के पास ले जाती है, वहाँ भी मानू को अपमान का सामना करना पड़ता है-'अरे, वाह! सरमा तो ऐसी रही हो जैसे नयी-नवेली ब्याहता सरमाएं । कुकर्म करते समय नहीं सोचा था कि ये दिन भी देखने पड़ेंगे ? बाप रे, देखने में कैसी सीधी-भोली दिख रही है और अंदर इतने गुन घुल रहे हैं. पहले मजे मारेंगी, जब थुक्का-फजीहत की नौबत आ जाएगी तब चलेंगी दाई-मिडवाइफ करने देखो जी, वैसे तो हम यह सब काम करते नहीं तुम्हारी खातिर कर दूंगी, पर दो सौ से कौड़ी कम नहीं..."[15]

इतना अपमान सहने के बाद मानू अपनी वजह से बुलू की राह में बाधा नहीं बनना चाहती है। वह मानू को पढ़ा लिखा कर अच्छा इंसान बनाना चाहती है जिसके लिए वह काकी की मदद से भट्ट जी के घर में काम पाती है किंतु" अपनी सच्चाई बता कर मैं नहीं चाहती कि अपनी वास्तविक स्थिति बतनही नहीं चाहती कि अपनी वास्तविक स्थिति बताकर अपना सिर नीचा करुं या न बताकर उन लोगों के साथ विश्वासघात करुं। सोच लिया है, जहां भी काम करूंगी, सब कुछ साफ़-साफ़ बताकर ही.. और साफ़-साफ़ बताने के बाद कितने दरवाजे बंद हो जायेंगे जिसे सुन कर भट्ट जी की पत्नी मानू से कहती है-'अब तू सारे जमाने की इज्जत का ठेका छोड़ और सुन, इसमें विश्वास-घात की क्या बात हैं भला । विश्वासघात तो तेरे साथ परिस्थितियों ने, समाज ने किया है। तुझे तो बेकसूर की सजा मिली है।'"[16] भट्ट जी की पत्नी इस कथन द्वारा सूर्यबाला जी ने समाज पर तीखा प्रहार किया है।
धीरे-धीरे मानू की जिंदगी में परिस्थितियों में बदलाव होता है, जहा मानू स्कूल में अध्यापिका बन जाती है तथा वह नई कोठरी में चले जाते हहै बुलू का मेडिकल कॉलेज में एडमिशन हो बुलू अंत में डॉ बलवीर वर्मा एमबीबीएस बन जाता है। उपन्यास के अंत में मानू की बहुत तबियत खराब होने लगती है जहां मानू के कैंसर होने का पता चलता है। किंतु इलाज के बावजूद में मानू की मृत्यु हो जाती है। अंत में बुलू को मानू का लिखा पत्र मिलता है। "देख, मैं एक सत्य स्वीकार रही हूं कि अंतिम क्षण तक तेरे उज्ज्वल सुखमय भविष्य का बंदनवार मेरी आंखों में टंगा रहेगा... एस कुछ ही महीने और, फिर तेरी (मेरी भी कह ले) साधना पूर्ण होगी. वह कितनी बड़ी उपलब्धि होगी, बुलू, सोच जरा जानती हूं यह उपलब्धि बहुत दिनों तक तुझे मेरे अभाव के अहसास में डुबोती रहेगी। तू सोचेगा, तेरी वजह से, कठिन परिश्रम की वजह से, सामाजिक वंचनाओं की वजह से, दीदी को मरना पड़ा या कि तू समय पर इलाज न करा पाया... नहीं, बुलू, इसमें से कुछ भी सच नहीं। सच तो यह है कि चिकित्सा रोग-मुक्त तो कर सकती है पर किसी के हिस्से की उम्र नहीं बढ़ा सकती। सूर्यबाला जी ने उपन्यास सुबह के इंतजार में के माध्यम से बलात्कार पीड़िता का संघर्ष, परिवार तथा समाज का उसके प्रति दृष्टिकोण का यथार्थ रुप से चित्रण किया है।"[17]

निष्कर्षतः सूर्य बालाजी ने अपने उपन्यास 'सुबह के इंतजार में' के माध्यम से स्त्री जीवन की समस्याओं, आंतरिक पीड़ाओं, संघर्ष, विघटन, मानवीय मूल्य के क्षरण के संकट और आत्मसंघर्षों को अभिव्यक्त किया है। उनकी गंभीर अन्वेषक दृष्टि स्त्री की समस्याओं पर चिंतन और समाधान हेतु पाठकों और समाज को मजबूर कर देती है।

सन्दर्भ सूची :

1. सूर्यबाला: सुबह के इंतेज़ार तक, पराग प्रकाशन,दिल्ली 3, पृष्ठ 9
2. सूर्यबाला: सुबह के इंतेज़ार तक, पराग प्रकाशन,दिल्ली 3, पृष्ठ 9
3. सूर्यबाला: सुबह के इंतेज़ार तक, पराग प्रकाशन,दिल्ली 3, पृष्ठ 9

4. सूर्यबाला: सुबह के इंतेज़ार तक, पराग प्रकाशन,दिल्ली 3, पृष्ठ 11
5. सूर्यबाला: सुबह के इंतेज़ार तक, पराग प्रकाशन,दिल्ली 3, पृष्ठ 12
6. सूर्यबाला: सुबह के इंतेज़ार तक, पराग प्रकाशन,दिल्ली 3, पृष्ठ 24
7. सूर्यबाला: सुबह के इंतेज़ार तक, पराग प्रकाशन,दिल्ली 3, पृष्ठ 27
8. सूर्यबाला: सुबह के इंतेज़ार तक, पराग प्रकाशन,दिल्ली 3, पृष्ठ 34
9. सूर्यबाला: सुबह के इंतेज़ार तक, पराग प्रकाशन,दिल्ली 3, पृष्ठ 38
10. सूर्यबाला: सुबह के इंतेज़ार तक, पराग प्रकाशन,दिल्ली 3, पृष्ठ 38
11. सूर्यबाला: सुबह के इंतेज़ार तक, पराग प्रकाशन,दिल्ली 3, पृष्ठ 39
12. सूर्यबाला: सुबह के इंतेज़ार तक, पराग प्रकाशन,दिल्ली 3, पृष्ठ 39
13. सूर्यबाला: सुबह के इंतेज़ार तक, पराग प्रकाशन,दिल्ली 3, पृष्ठ 44
14. सूर्यबाला: सुबह के इंतेज़ार तक, पराग प्रकाशन,दिल्ली 3, पृष्ठ 46
15. सूर्यबाला: सुबह के इंतेज़ार तक, पराग प्रकाशन,दिल्ली 3, पृष्ठ 57
16. सूर्यबाला: सुबह के इंतेज़ार तक, पराग प्रकाशन,दिल्ली 3, पृष्ठ 62-63
17. सूर्यबाला: सुबह के इंतेज़ार तक, पराग प्रकाशन,दिल्ली 3, पृष्ठ 94

•